सांस्कृतिक धरातल के विविध आयाम : मध्य हिमालय के संदर्भ में

सोनी घिल्डियाल
शोधकर्त्री
संगीत एवं ललित कला संकाय
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

सारांश : -
मध्य हिमालय की संस्कृति से तात्पर्य है - भारतीय संस्कृति। भारतीय संस्कृति हिमालय की भाँति उन्नतशील एवं गंगा के समान निर्मल एवं अलकनन्दा एवं मंदाकिनी की भाँति गतिशील एवं रसवंती है। मध्य हिमालय की अपनी ऐतिहासिक परंपरा, भौगोलिक विशिष्टता, धार्मिक महत्व, सांस्कृतिक आस्मिता एवं सामाजिक पृष्ठभूमि है जोकि मध्य हिमालय के लोकसाहित्य लोकसंगीत, लोकगाथा, लोकनाट्य कथाओं, व्रत, त्यौहार, कौथिक, लोकाचार, मान्यताएँ जनश्रुतियों, किवदन्तियों, लोकोक्तियों विशिष्ट पहनावा एवं युगों-२ से चली आ रही रीति-रिवाजों का सहज एवं सशक्त स्वरूप जनजीवन में प्रस्तुत करती है।

बीजशब्द: - लोक, परंपरा, लोकगीत, नृत्य, लोक साहित्य।

संस्कृति के संदर्भ में यह कहा गया है कि -

"संस्कारैः आत्मधर्मादिभिः जीवनं संस्करोति इति संस्कृतिः"

"अर्थात मानवीय संस्कारों द्वारा जो आत्मानन्द के धर्म है। उनसे जो जीवन को विशुद्ध एवं व्यवहारोपयोगी बनाती है, वह संस्कृति हैं, जिसका उपयोग भली भाँति जनकल्याण के लिए किया जाता है वह संस्कृति है"[1]

हिमालय की सुमेरू, सतोपंथ एवं शिवलिंग, बंदरपूँछ, गौरी पर्वत, केदार कांठा, नीलकंठ, श्रीकंठ और गन्धमादन पर्वतश्रंखलाएँ भारतीय संस्कृति के महर्षियों के लिए युगों-युगों से पूजनीय रही है। भारतीय ऋषियों ने हिमालय के साथ - 2 नदियों का भी पूजन किया है । जिसके अर्न्तगत गढ़वाल हिमालय की गंगा तो भारतीय संस्कृति की आत्मा है, 'सप्तसैंधव' जिसका उल्लेख वैदिककाल में प्राप्त होता है। ये सप्त नदियाँ मध्यहिमालय के अंतर्गत ही थी।

महर्षि वेदव्यास वादरायणाचार्य जी ने तपोभूमि बदरिकाश्रम के निकट (माणा) मणिभद्रपुर के समीप अलकनंदा एवं सरस्वती नदियों के संगम में स्थित व्यासगुफा में महाभारत ग्रंथ की रचना की थी।

आधुनिकता में भी यह स्थल व्यासगुफा, गणेशगुफा एवं मुचुकुन्द गुफाएँ इसी ऐतिहासिकता के क्रम में दर्शनीय हैं।

महाभारत के मंगलाचरण के प्रथम श्लोक से यह तथ्य स्पष्ट होता है: -

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् |
देवी सरस्वती व्यासं ततो जयमुदीरयेत।।

गढ़वाल के सुमेरू पर्वत, श्रीकंठ, शिवलिंग और भागीरथ शिखरों पर किया गया राजा भगीरथ का तप लोक विश्रुत है अतः आज भी पतित पावनी माँ गंगा उनके नाम को अमर किए हुए हैं। शिवजी की जटा से माँ गंगा को प्राप्तकर गंगोत्री में गंगादशहरा के दिन षोड्शोपचार कर्मकाण्ड विधि से माँ गंगा का पूजन प्रथम बार किया गया था। अत: गोमुख से देवप्रयाग तक गंगा की यह पवित्र जलधारा भागीरथी के नाम से जनविख्यात है।

सांस्कृतिक धरातल के विविध आयाम उत्तराखण्ड के परिप्रेक्ष्य में या मध्य हिमालय के संदर्भ में सांस्कृतिक धरोहर की दृष्टि में- लोक संस्कृति और लोक साहित्य का किसी भी देश और जाति के जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है अत: इस सत्य को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि लोकगीतों के माध्यम से ही हमारे लोकजीवन की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के विविध आयाम सामान्यतः स्पष्ट हो जाते हैं। हमारे देश के अंतर्गत ऋग्वेद लोक साहित्य की परम्परा का सर्वाधिक प्राचीनतम एवं रमणीय उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो पुराण और महाभारत काल के आगमन तक लिखित साहित्य के रूप में लुप्त सा हो गया किन्तु मौखिक रूप से लोक जीवन में निरंतर प्रवाहित रहा।

डॉ वासुदेव शरण अग्रवाल जी के अनुसार भी लोक का अध्ययन बुद्धि का कुतूहल नहीं है तथा इसे बस एक और नया शास्त्र कहकर नहीं टाला जा सकता है अपितु लोक सम्पर्क के अभाव में सभी शास्त्र अधूरे हैं |

जिस शास्त्र के अर्न्तगत लोक का अमृत निष्पंद नहीं मिले वह शास्त्र कितना भी पांडित्यपूर्ण हो निष्प्राण रहता है। जिस शास्त्र का संबंध लोक से ना जुड़ा हो वह मात्र बुद्धि का छलावा है।

(प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नरः)
महर्षि वेदव्यास कृत

जो लोक को स्वयं अपनी दृष्टि से देखता है वही उसे पूर्ण रूप से देख पाता है, अर्थात् प्रत्यक्ष दर्शन ही समग्र कुंजी है।

मध्य हिमालय की सांस्कृतिक धरातल के अंतर्गत गढ़वाल एवं कुमाऊँ मण्डल अपने प्राकृतिक सौन्दर्य, निराली, प्राचीन सांस्कृतिक सभ्यताओं एवं विरासत तथा अपनी सुव्यवस्थित जीवन पद्धति के लिए ख्याति

पूर्ण रहा है। मध्य हिमालय का सामाजिक एवं सामुदायिक जनजीवन भारतीय जीवन पद्धति और संस्कृति से प्रभावित है। मध्य हिमालय की भौगोलिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों का यहाँ की भाषा लोकसाहित्य संस्कृति एवं लोकगीतों नृत्यों पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। यहाँ की संस्कृति भाषा गीतों एवं नृत्यों में गुजरात, पंजाब, राजस्थान, बंगाल, महाराष्ट्र, केरल आदि प्रदेशों की सांस्कृतिक भाषा नृत्यगीतों में समता प्राप्त होती है जैसे गढ़वाल का चौफुंला नृत्यगीत में गुजरात के 'गरबा' और 'गरबी' नृत्य से कई गुना आकर्षण आ गया है। अतः गढ़वाल की धरती नृत्यमय है, उमंग एवं उल्लास के साथ जीना ही यहाँ की प्रमुख विशेषता है। गढ़वाल के जागर, पाँवड़े, खुदेड़ गीत लिखित साहित्य भक्ति, वीर श्रृंगार एवं करुण रस की परम्पराओं को भी मात देते हैं। यहाँ के बाजूबन्द, लामण, छोपती उदात्त श्रृंगार के मनोहारी संवाद गीत है। खुदेड़ गीत यहाँ के नारी की हृदय की करुणा की काव्यश्री है वहीं झुमैलो और चौफुंला गीतों में प्रकृति का वैभव बिखरा है।

- **कुछ प्रमुख गढ़वाली लोक गीतों का श्रेणी विभाजन निम्न है: →**

1) **मॉगल गीत**
2) **जागर गीत**
3) **पॅवाड़े**
4) **थड्यांगीत**
5) **चौफुंला**
6) **खुदेड़ गीत**
7) **बारामासा**
8) **चौमासा**
9) **होरी**
10) **बाजूबन्द**
11) **लामण**
12) **छोपती**
13) **कुलाचार**
14) **पसारा**
15) **बसंती गीत**
16) **लोरीगीत**
17) **पटरखाई में छूडा**
18) **नौन्याली गीत**
19) **दूडा**
20) **सामयिक गीत**
21) **झुमैलो इत्यादि।**

(1) माँगलगीत - माँगल से तात्पर्य ही है मंगल अर्थात् मांगलिक अवसरों में गाये जाने वाला गीत। गढ़वाल में वैदिक ऋचाओं की भाँति ही सर्वप्रथम कार्यासिद्धि हेतु ब्रह्म, अग्नि, इष्टदेवता, भूमिदेवता, पंचनाम देवता, दसों दिशाओं के देवता, गृहद्वार के देवता शिव इत्यादि देवी देवताओं का आह्वान किया जाता है। विवाह के मांगलों की अंतर्गत -न्योता, दुल्हन का चयन, मंगल स्नान, विवाह के वस्त्र बारात की तैयारी, धूली अर्घ्य, विदाई से लेकर वर वधु के गृह प्रवेश तक के गीत आ जाते हैं।

(कन्यादान माँगल गीत)

दे द्यावा बाबाजी, दे द्यावा बाबा जी कन्या कु दान,
दे द्यावा बाबा जी कन्या कु दान हे।
दे द्यावा बाबा जी, दे द्यावा बाबा जी कन्या कु दान,
दे द्यावा बाबा जी कन्या कु दान है।
हीरा दान, मोती दान, सब को ही देला
को भग्यान देलो कन्या कु दान है।

खड़े होकर एक पंक्ति के अंतर्गत रह कर जब माँगल गाया जाता है तो उनमें अभिनय का पूट तथा अधिकता में रहता है भावाभिव्यंजन।
(2) जागर गीत - जागर का अर्थ है जागना या जगाना। जागर का अर्थ देवताओं को नचाने से है, जागर गीतों का ज्ञाता जगर्या जब डमरू थाली को तथा औजीवादक ढोल-दमामै व हुड्क्या हुड़की को बजाते हुए देवताओं के यशोगान की स्तुति का वर्णन करते हुए गाते हुए देवताओं के पस्वा को विभिन्न प्रकार से नचाते हुए रात्रि जागरण करते है। गढ़वाल के नार्गाजा, नरसिंह देवी नगेलो, घड्याल पांडव, क्षेत्रपाल, भूत, आंछरिया इत्यादि देवताओं को नचाया जाता है।
जागर भी लोक नृत्यामक गीत है जिसमें अभिनय का तत्व सर्वाधिक होता है।
(3) थड़्या गीत - गढ़वाल में बसंत पंचमी से विषुवत संक्राति तक विवाहित लड़कियों द्वारा घर के थाड (आँगन) में थड़िया गीत गाए जाते है। इन गीतों के साथ नृत्य आवश्यक होता है अर्थात वास्तविकता में यह थड़्या गोल न होकर थाड अर्थात मैदान में नृत्य करते हुए उस समय का लोक-नृत्यात्मक गीत है।

(4) झुमैलो गीत - बसंत ऋतु के आगमन पर जब चारों ओर मादकता छा जाती है तब मायके न जा सकने वाली युवतियों की हृदय पीड़ा इन गीतों / नृत्यों के माध्यम से व्यक्त होती है। मैथिली, भोजपुरी 'झूमर नृत्य' की भाँति यह लोकनृत्यात्मक गीत अनोखी अदाकारिता को प्रदर्शित करते हुए गोल घेरे में झूमकर किया जाता है।

(5) खुदेड़गीत - आत्मिक सुधा में विहल मायके की स्मृति में गाया गया ह्दयविदारक गीत विवाहिताओं के द्वारा मायके की ओर से आने वाले पक्षी को सन्देशवाहक बनाकर गीतों के साथ नृत्य किया जाता है।

(6) बासंतीगीत - प्राकृतिक के सौन्दर्य के साथ जीना ही, पहाड़ की बेटियों का उल्लासमय गीत / नृत्य इस विधा को प्रदर्शित करता है।

(7) बारहमासा गीत - गढ़वाल के अंतर्गत 12 महीनों के अपने गीत होते हैं जिसके अंतर्गत होने वाले कार्यों में प्राकृतिक सुन्दरताओं और उनके साथ मानव के विशिष्ट सम्बन्धों का सुन्दर चित्रण होता है।

'घसियारी लोक नृत्य', घुघती नृत्य एवं मयूर नृत्य बारहमासा गीतों के साथ ही किये जाने वाले लोकनृत्य है।

(8) पँवाड़ा - वीर भावना से ओत प्रोत गीत पँवाड़े' कहलाते है। मध्यहिमालय में अंतर्गत आज भी देवरूप के स्वरूप में वीरों के पवाड़े 'धामी' अथवा 'जागर्या ' के माध्यम से गाए एवं उनके (पस्वा) नर्तक, गीत की भावनानुसार नचाया जाता है।

(9) लामण - खाई जौनसार क्षेत्र के अंतर्गत गाया जाने वाला लोक नृत्यात्मक गीत है इस गीत की प्रमुख विशेषता यह है कि इसकी प्रत्येक पंक्ति सार्थक होती है, जिसमें पट्ट मिलाने हेतु कोई निर्देशक पंक्ति नहीं जोड़ी जाती है।

(10) चौंफुला गीत - गढ़वाली लोकनृत्य गीतों के अतंर्गत चौंफल का विशिष्ट स्थान हर्षोत्फुल्ल दिग्दर्शन से है, चौ का अर्थ है, "चारों" तथा फुला से तात्पर्य "फूलों के खिला होने" से है, अर्थात् चारों और प्रसनता को व्यक्त करता हुआ है- "नृत्यात्मक गीत"।

प्रसिद्ध किंवदन्ती के अनुसार माता पार्वती जी ने शिवजी को प्रसन्न करने हेतु अपनी सखियों संग पर्वतश्रृंखला पर 'चौरी' चौपाल सी बनायी थी एवं उसके चारों ओर सखियों संग नृत्य किया था उस चौरी के चारों ओर नाना प्रकार के पुष्प खिल गए थे तथा इस नृत्य से प्रसन्न होकर शिवजी ने माता पार्वती से विवाह कर लिया तभी से चौं(री), चौ-फुलों एवं फुला-चौंफुला नृत्य मध्य हिमालय के लोकसंगीत में अत्यधिक प्रसिद्ध हो गया इस नृत्य से सम्बन्धित कथाएँ एवं कहानियाँ भी लोक जगत में जनविख्यात है।

(11) कुलाचार गीत - औजियों एवं भाट हरिजन जाति के लोगों के द्वारा अपने ठाकुरों का कुलाचार गीतों के रूप में वर्णन करने के साथ नृत्य करते हैं। इसके अंतर्गत कुल की वंशावली एवं यशगाथा का गान एवं फिरकणियाँ (चक्कर) काटकर नृत्य होता है।

(12) होरी गीत - यह सर्वप्रथम नृत्यात्मक गीत है अर्थात् नृत्य प्रथम गीत बाद में उल्लास एवं रसिकता इस नृत्यात्मक गीत का प्रमुख विषय है।

(13) चौमासा गीत - वर्षा ऋतु के समय मध्य हिमालय के मौसमी परिवेश को प्रस्तुत करता यह गीत परदेश गए प्रीतम की स्मृति में मन में उठते तूफान की व्यथा को प्रदर्शित करता सुन्दर चित्रण इसमें दृष्टिगोचर होता है।

(14) बाजूबन्द गीत - प्रेमसंवादात्मक गीत जिसमें अभिनय प्रमुख तत्व है इन गीतों का संवाद गीत से प्रारम्भ होकर हाव भाव प्रदर्शन एवं आंगिक अभिनय द्वारा रंजकता प्रदान करने वाला होता है, प्राय: यह जंगलों में गाए जाने वाले नृत्यगीत होते हैं।

(15) पटखाई में छूड़ा - यह उपदेशात्मक गीत होते है इन लोक नृत्यात्मक गीतों में बुजुर्ग लम्बी लय में विशिष्ट प्रकार का अभिनय करते हुए गीत सुनाते है।

(16) दूड़ा गीत - यह भी बाजूबन्द गीत नृत्य शैली का रवाँई - जौनपुर का लोक नृत्यात्मक गीत है।

(17) नौन्याली गीत - इस गायन शैली में प्रश्नोत्तरों की प्रधानता अधिक होती है। इसमें एक बालक दूसरे का हाथ पकड़ता है तथा विशिष्ट भाव भंगिमा के साथ गायन करते हुए खेल खेल में गीत उपजते है। इस गीतों में भी भावों का प्रदर्शन आंगिक अभिनय के द्वारा प्रदर्शित होता है।

अतः मध्य हिमालय की अपनी अलग विशिष्ट समृद्ध संस्कृति रही है, यह **"पहाड़ी प्रदेश होने के साथ-2 तीर्थाटन, पर्यटन, कला-सांस्कृतिक एवं विभिन्न मेलों के आयोजनों के लिए विश्वविख्यात है। यहाँ की सभ्यता, तहजीब व साक्षरता देश के अन्य हिस्सों से इसे पृथक पहचान दिलाती है।"**[2]

यहाँ के सांस्कृतिक परिवेश में अनेकता में एकता का भाव प्रदर्शित होता है यह प्रदेश, गढ़वाल, कुमाऊँ, जौनसार एंव मैदानी तहजीब के विभिन्न रंगों को स्वयं में समेटे सामूहिक सद्भावना के संदेश को देता दिखाई देता है। यहाँ की संस्कृति की झलक यहाँ के पर्व त्योहारों में दृष्टिगत होती है। यहाँ बारहों महीनों का संबंध त्योहारों एवं मान्यताओं से है। जिनमें -

- **चैत्र (चैत) -** चैत्र माह के प्रथम गते नया साल अर्थात् नव संवत्सर प्रारम्भ होकर इस दिन से झोड़े भी शुरू जाते हैं जो वैशाख के प्रथम गते तक चलते हैं। **"अल्मोड़ा जिले में फूलदेई होती है। इस दिन हरेला भी बोया जाता है।"**[3] विवाहिताओं को चैत्र माह में भिटौली देने का भी रिवाज है। भिटौली से तात्पर्य माता-पिता के द्वारा बेटी को मिठाई, वस्त्र इत्यादि सामान भिटौली के रूप में दिया जाता है।
- **वैशाख -** वैशाख की प्रथमगते बिखौती है जिसमें चैत्र माह से चल रहे झोड़ों का समापन देवस्थलों में झोड़ों गायन के माध्यम से किया जाता है तथा जगह - 2 मेलें/ थौलों का आयोजन होता है।
- **ज्येष्ठ -** जेठ महीने में गंगा दशहरा का त्यौहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है।
- **आषाढ़ -** असाड़ माह खेती की निराई-गुडाई के साथ आखिरी नौ दिन में हरेला बोया जाता है तथा श्रावण माह की प्रथम गते को काटा जाता है।
- **श्रावण -** सौंण का महीना देवी देवताओं की पूजा विशेषकर - बैसी, जागर और पार्थिव पूजा का है।
- **भाद्र-** भादो माह की प्रथम गते घी संक्रांति होती है। इस दिन सभी सिर पर घी लगाते एवं खाते हैं। इसी माह बिरुड़ाष्ट्मी का त्योहार भी मनाया जाता है।
- **आश्विन -** असोज के महीने की प्रथम प्रविष्टा को **खतुड़वा** होता है। इस समय धान, झुंगुरा, मडुँवा, कौणी अनाजों तथा गहत, सोयाबीन, भट् की फसल समेटी जाती है।
- **कार्तिक-** कार्तिक अमावस्या पर दीपावली का पर्व मनाया जाता है जिसमें आँगन के बीच स्थित ओखल के चारों तरफ तथा घर के पूजा स्थल तक गेरू से लिपाई की जाती है तथा गेरू के सूखने के पश्चात् कच्चे भीगे चावलों को पीसकर उससे ऐपण तथा लक्ष्मी जी के चरण बनाकर रात्रि पूजन किया जाता है।
- **मार्गशीर्ष -** मंगसीर माह 10 गते हलिया दशहरा मनाया जाता है इस दिन हल की पूजा कर ओखल में धान भरते है तथा हलवाहा को दिया जाता है।
- **पौंष -** इस माह शुभ कार्य वर्जित तथा काला माह के रूप में जाना जाता है।
- **माघ -** मकर संक्रान्ति एवं घुघुतिया त्यौहार इसी माह मनाए जाते हैं इसे **मौसात** तथा **तत्वाणी** भी कहा जाता है।
- **फाल्गुन -** इस माह धान, मँडुवा की बोआई के अतिरिक्त सोयाबीन, गहत, भट, रैंस भी बोए जाते हैं तथा चारों ओर होरी के फागों की बयार चल जाती है।

अत: सामाजिक शिष्टाचार संस्कृति का एक प्रमुख अंग है मध्य हिमालय के गीतों में निहित सांस्कृतिक धरातल के जिन विविध आयामों का उल्लेख पूर्व-पक्तियों में किया गया है उससे

पूर्णतः स्पष्ट होता है कि लोकगीत / नृत्य एवं लोक साहित्य, कला, त्यौहार, मेले/ पर्व व्यक्ति विशेष की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति तथा मनोरंजन के साधन ही नहीं होते अपितु समूह के धर्म आचार, विचार और प्रथाओं अथवा उसकी संस्कृति के भूत और वर्तमान में सामंजस्य बनाये रखकर भविष्य में भी उनकी परम्परा को स्थायी बनाये रखने में सहायक होते हैं।

- **संदर्भ ग्रंथ सूची: -**

(1) नौटियाल, डॉ. शिवानन्द (2003) गढ़वाल के लोकनृत्य गीत हिन्दी साहित्य सम्मलेन प्रयाग, पृ० सं० 27।

(2) अनंत आवाज, (2018) राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका, पृ० सं० 26।

(3) फुलोरिया, चित्रा (2016) प्रथम संस्करण उत्तराखण्ड निदेशक राष्ट्रीय पुस्तक - न्यास, भारत वसंत कुंज नई दिल्ली ।

(4) पुरोहित, डॉ. दिनेशचन्द्र प्रथम संस्करण (2015), लोकाभिव्यक्ति के दो स्वर गढ़वाली एवं भोजपुरी लोकगीत, विनसर पब्लिशिंग देहरादून, उत्तराखण्ड ।

(5) चातक, डॉ. गोविन्द, (1968) गढ़वाली लोक गीत एवं सांस्कृतिक अध्ययन ओमप्रकाश राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली।

(6) बहुगुणा, डॉ. विजय (2017) उत्तराखण्ड का जन इतिहास लोक संस्कृति एवं समाज, समय साक्ष्य देहरादून।

Copyright & License:
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.